प्रतिहिं

इस संग्र
से कई
है। 'म
कहानी
के प्रति

इस सं
जो सा
शासन
कहती
नरसंह
का पा
शिख
के आ
करती
लिखी
इसी

इस त
भार
व्यव
ढंग

विकास पेपर बैक्स
मेज रोड, गांधी नगर, दिल्ली-110031

प्रतिहिंसा तथा अन्य कहानियाँ

मुद्राराक्षस

© लेखक

प्रकाशक
विकास पेपरबैक्स
IX/221, मेन रोड, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1992

मूल्य
पचास रुपये

मुद्रक
अजय प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

PRATIHINSA TATHA ANYA KAHANIYAN (Hindi)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अपने प्रिय साथी
विलायत जाफ़री को

लोग शोर मचाकर सतीश को बढ़ावा देने लगे। इससे दयाल का गुस्सा और बढ़ गया। सतीश बहादुर थोड़ा चूक जाता तो नीचे आ चुका होता, पर वह जल्दी ही सँभल गया। लोगों का शोर उसने सुना और झुककर उसने दयाल को कमर से उठा लिया। दयाल अचकचा गए। उन्होंने छटपटाकर उसकी पीठ पर एक घूँसा मारा। निदेशक ने सीटी बजायी, "घूँसा नहीं चलेगा।"

दयाल को उठा लेने पर शोर और बढ़ा और लोग उनके नीचे गिराए जाने का इन्तजार करने लगे। तभी लोगों ने देखा, सतीश बहादुर के घुटने मुड़े। वे दयाल को उसी तरह उठाए हुए बैठ भी गए और देखते ही देखते लोट गए। दयाल ने उत्साह में आकर उन्हें रगड़ भी दिया। लोग गुस्से में सतीश बहादुर को गालियाँ देने लगे।

दयाल बेहद खुश हो गए थे।

सतीश बहादुर तेजी से उठकर भीड़ में गुम हो गए। आज जब वे लौटे तो एक सन्तोष उन्हें जरूर था, उन्होंने अपनी सालाना रिपोर्ट खराब होने से बचा ली थी। बीवी की चाय का इन्तजार करते उन्होंने आज फिर पिछली खिड़की खोल ली। थोड़ी देर वे नीचे झाँकते रहे फिर परदा बन्द कर दिया। नाला कितना ज्यादा गन्दा है, उन्होंने सोचा, और बदबू भी किस कदर असह्य !

फरार मल्लावाँ माई राजा से बदला लेगी

छोटी लाइनवाली गाड़ी मल्लावाँ माई पर रुकती नहीं है। हाँ, देखनेवाले को लगता है, वह उस तीन-चार सौ गज की समतल पट्टी पर पहुँचकर हल्के से ठिठकती है। पर यह शुद्ध भ्रम है। गाड़ी वहाँ से कोई एक कोस आगे मल्लावाँ खास पर रुकती है। हो सकता है वह रुकने की तैयारी मल्लवाँ माई से ही शुरू कर देती हो। सीटी वह हमेशा इसी समतल पट्टी पर पहुँचकर बजाती है, दो बार हिचकी लेकर फिर बहुत तीखे लम्बे स्वर में। लोग कहते हैं, वह मल्लावाँ माई का नाम लेती है। आकाश की तरफ गर्दन उठाकर, खूब लम्बी साँस खींचकर।

मल्लावाँ खास सरकारी नाम है। मल्लावाँ माई भी जगह का अपना नाम नहीं है। जहाँ आज मल्लावाँ माई या उसके गिरते हुए खण्डहर हैं, वहीं एक बस्ती हुआ करती थी मल्लावाँ। ढहती कच्ची दीवारों से अटकी काली, सड़ी बल्लियों और दरवाजों की उखड़ी चौखटों के अवशेषवाली इस उजाड़ जगह के उस पार थोड़े फासले पर जो पक्की इमारत थी, वह भी ढहती दीवारों और बिखरती ईंटों के ढेर में बदल चुकी है।

कहते हैं, इन खण्डहरों में दुधारू जानवर कभी नहीं आते। सिर्फ सोमवार की शाम इन खण्डहरों से बाहर रेल की पटरी से सटी समतल जमीन पर औरतों का एक झुंड दिखाई देता है। यह झुंड वहाँ सूरज डूबने के बाद तक ठहरता है और फिर इधर-उधर बिखर जाता है।

हर सोमवार जब सूरज उतरना शुरू करता है, आसपास की गर्द और दरख्तों के रहस्य जाल से औरतें धीरे-धीरे प्रकट होती हैं। वे सब एक ही गीत गाती हैं। लेकिन बहुत देर तक गीत के बजाय अस्पष्ट जंगली आवाजों की गुंजलक-सी ही वहाँ फैलती रहती है। जैसे बाँसों के झुरमुट से हवा

उलझ-उलझकर सीत्कार कर रही हो। या जैसे बीन में कोई सपेरा सुर भर रहा हो।

औरतों का वह गीत कई तरफ से बहता आता है और इसी समतल पट्टी के बीचोबीच बने एक बहुत छोटे से चबूतरे पर इकट्ठा हो जाता है।

गीत बड़ा विचित्र है—असुर दानव सीतला माई को चिट्ठी लिखता है, मैं तुमसे ब्याह करूँगा। सीतला माई असुर दानव को चिट्ठी भेजती है, मैं तेरा संहार करूँगी। उनचास हाथी और पचास घोड़े लेकर असुर दानव आया था। देवी के हाथ में ढाल और तलवार थी। देवी लड़ते-लड़ते मठ में समा गई। असुर मर गया। हे भवानी देवी—हे शीतला माई—

औरतें गाती हैं, बहुत ऊँचे स्वर में लेकिन सभी अलग अपनी लय में। इसलिए समवेत गायन जैसा कुछ नहीं होता। दूर पर कहीं बहुत-सी तलवारों के देर तक टकराने की जैसी आवाज गूँजती है। धुँधलका होते-होते तलवारों के टकराने की यह आवाज फिर बिखरने लगती है और वहाँ से आखिरी औरत के गायब होने तक बाँसों में उलझती हवा की सनसनी जैसी सुनाई देती रहती है।

हो सकता है, मेरे जैसे आदमी को हर गाँव थोड़ा असामान्य ही लगे, पर मल्लावाँ निश्चय ही ऐसा है जो सहज बिल्कुल नहीं कहा जा सकता। मैंने रातों को वहाँ अँधेरा कुछ ज्यादा ठहरा हुआ, लगभग जमा हुआ-सा पाया। और आदमी खुश्क होकर बुझे दीये की तरह खामोश।

मुझे अब महसूस हुआ, रामेश्वर बाबू में भी दरअसल यही आदत रही होगी। मुझे हमेशा लगता रहा है कि रामेश्वर मितभाषी हैं। अक्सर दो-चार शब्दों से ज्यादा कभी नहीं बोलते। कार्यकारिणी या राष्ट्रीय परिषद् की धुआँधार बैठकों में भी बहुत ज्यादा जरूरी होने पर ही एक-दो वाक्य बोलते हैं। उनके साथ कई बार लम्बी यात्राएँ भी की हैं। यात्राओं के दौरान मैंने उन्हें बातचीत के लिए उत्सुक कभी नहीं पाया।

वे महासंघ के उपाध्यक्ष हैं। चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की यूनियन के अध्यक्ष हैं। उनकी यूनियन के सदस्यों को उन पर अन्धविश्वास है। एक बार उनके सदस्यों की एक सभा में उन पर भाषण देने के लिए दबाव डाला

गया। वह भाषण मुझे आज भी याद है, क्योंकि चार के अलावा पाँचवाँ वाक्य वे नहीं बोले थे।

सहसा मैं उनके इस तरह मितभाषी होने का रहस्य जान गया। खामोशी तो उन्हें अपने परिवेश से मिली थी।

चारपाई पर लेटे हुए वे इस समय भी इतने ही खामोश थे। सुबह से वे सिर्फ तीन बार अपने हमेशा जैसे संकेत वाक्यों में बोले थे। मेरे आने पर उन्होंने लेटे-लेटे नमस्कार किया और पूछा, "वहाँ सब ठीक?"

मैंने उन्हें संक्षेप में यूनियन की स्थिति बता दी। सुनकर वे चुप हो गए। बस।

दागदार मत्थेवाले हथौड़े से ताँबे की मोटी चादर को लापरवाही से पीटकर गढ़े गए से उनके चेहरे पर यातना की कमजोरी के बावजूद हमेशा जैसी भिंची मुस्कराहट बनी हुई थी। मुझे कसमसाते देखकर उन्होंने धीरे से पूछा, "गर्मी?"

वहाँ गर्मी थी। हवा थमी होने की वजह से घुटन भी थी जो एक बेचैनी-सी पैदा करती थी। पर मैं भरसक अपनी इस असुविधा को जाहिर नहीं होने देना चाहता था।

मल्लावाँ नाम की इस जगह की यह मेरी तीसरी यात्रा थी। बिना किसी पूर्व योजना के। तीनों ही यात्राएँ लगभग अनायास ही हुई थीं, लेकिन मैं भाग्यवादी होता तो अब तक जरूर यह विश्वास कर चुका होता कि कहीं न कहीं इन यात्राओं के आयोजन में मल्लावाँ माई का हस्तक्षेप है।

पहली बार मल्लावाँ खास मैं रामेश्वर बाबू की बेटी की शादी में आया था। हालाँकि वैसी खामोश और किसी कदर उदास शादी मैंने जीवन में कभी नहीं देखी थी। किसी तरह की सजावट, अतिरिक्त रोशनी की कोई कोशिश तक वहाँ नहीं थी। विवाह की सज्जा के नाम पर बाहरी दरवाजे के दोनों तरफ आक के चन्द पत्तों पर छोटे आकार के दीये जला दिए गए थे। बाजे तो थे ही नहीं, किसी भी तरह के।

मेरी रुचि विवाह की रस्म देखने में थी और उसके लिए जागना पड़ता। रामेश्वर को विश्वास था कि शहर में रहनेवाला मैं इस तरह जाग नहीं सकता और बिना हवा के सो भी नहीं सकता। दो-तीन शब्दों में ही

उन्होंने अपना विनम्र लेकिन अनिवार्य फैसला दे दिया था कि मुझे खाना खाने के बाद सो जाना होगा। उनकी बात काटने की कोई गुंजाइश नहीं थी। चारपाई पर हथकरघे वाली एक नयी चादर बिछी थी। तकिया उसी चादर से ढका हुआ था। मेरी आदत सोते वक्त हर करवट के साथ तकिये को अलग-अलग कोण के इस्तेमाल की रही है। मैंने तकिये पर से चादर पलट दी। तकिया चादर से जानबूझकर ढका गया था। वह ज्यादा साफ नहीं था। उसे ज्यों का त्यों ढँककर मैं लेट गया। साथ आया आदमी सिरहाने खड़ा होकर पंखा हिलाने लगा। यह मुझे अच्छा नहीं लगा। पर मेरी वर्जना से वह प्रभावित नहीं हुआ। जाहिर है, रामेश्वर के आदेश को वह किसी भी कीमत पर टाल नहीं सकता था।

सिरहाने पंखा झलनेवाले अजनबी की मौजूदगी और तकिए की अरुचिकर स्थिति के कारण सो पाना आसान नहीं था।

गहरे नीले आसमान पर बहुत साफ चमकते हुए सितारों के जाल की पृष्ठभूमि में छोटे-छोटे चमगादड़ उड़ते हुए कलाबाजियाँ खा रहे थे। बचपन में इस तरह उड़ते चमगादड़ों की तरफ मैं एक कपड़ा उछाल देता था और चमगादड़ उस पर झपटकर उसी के साथ नीचे आ जाता था।

देर तक नींद न आ सकने की आशंका से मुझे थोड़ी बेचैनी होने लगी थी इसलिए मैं यत्नपूर्वक अपने मन को कहीं और व्यस्त कर लेना चाहता था। पूरे मल्लावाँ में रामेश्वर के चेहरे की खामोशी थी, पर नीचे घर के किसी कोने से बिना ढोलक या मंजीरे की संगत के अजीब घुटी-सी और उदास आवाज में कुछ औरतें गा रही थीं—एक बहुत ही अजीब गीत—खा लो, खा लो। दही-भात खा लो, तुम्हारी बेटी पहर रात रहे विदा हो रही है। ओ मेरी माँ, तुम भैया को तो हमेशा बड़ी खुशी से खाना खिलाती थीं और मुझे खाना नाराज होकर ही देती थीं। अरे मेरी माँ, मैं और मेरा भाई साथ ही जनमे थे, साथ खेले थे, पर भैया को तुमने पिता का राज दे दिया और मेरी शादी इतनी दूर कर दी। अम्माँ, अब तुम खुशी-खुशी दही-भात खाओ।

इतनी गहरी चुप्पी के बीच ऐसे दर्दनाक गीत को सुनते-सुनते शायद थोड़ी देर के लिए मैं सो गया था क्योंकि जब दुबारा मैंने आसमान की तरफ

निगाह डाली तो लगा सितारों पर भाप-सी जम गई है। और नीचे से सिर्फ किसी बर्तन की आवाज आ रही है जैसे उसे खुरचा जा रहा हो। सिरहाने खड़ा आदमी उसी तरह पंखा झले जा रहा था।

पैर के टखनों और पंजों पर तेज खुजली और जलन महसूस हुई। इस बीच वहाँ शायद कई मच्छरों ने बहुत इत्मीनान से काटा था।

जिसे मैंने सितारों पर छायी भाप समझा था, वह सुबह का पूर्वाभास था। टखनों और पंजों की खुजली ने खासा ही बेचैन कर दिया था। मैं उठ गया।

सिरहाने खड़ा आदमी पंखा हिलाना रोककर मुझे देखने लगा फिर तुरन्त नीचे चला गया।

रामेश्वर उस वक्त सचमुच दही-भात खा रहे थे और अपने स्वभाव के विपरीत खासी रुचि से। बेटी विदा हो चुकी थी। मगर क्या रात को ही?

कुछ मैली दरियाँ, फूल-पत्ते, बरामदे में फैले कुछ बर्तन और मिट्टी के एक घड़े पर जल रहे ताजे दीये के अलावा वहाँ शादी का और कोई निशान नहीं था। मंडप भी नहीं। बेदी भी नहीं, गैस बत्ती भी नहीं। कई लालटेनों से काम चलाया गया था जो अब बिल्कुल ठण्डी थीं।

दिन होते-होते इस विचित्र विवाह-संस्कार को लेकर इतने सवाल उभर आए थे कि मुझे एक उलझन-सी होने लगी थी। इस पारिवारिक घटना के बारे में बहुत ज्यादा जानकारी लेने में अपने संकोच के बावजूद मैंने रामेश्वर बाबू से कुछेक सवाल जरूर किए। मेरे कई, एक-दूसरे में उलझे सवाल उन्होंने एक साथ सुने और हमेशा की तरह मेरे चेहरे को देखकर देर तक मुस्कराते रहे। उसके बाद तारघर जैसी सांकेतिक भाषा में उन्होंने जो कुछ बताया वह बहुत सन्तोषजनक नहीं था।

मल्लावाँ में किसी जमाने में एक दर्दनाक रिवाज था। मल्लावाँ की हर लड़की को शादी के बाद पहली रात मल्लावाँ के सामंत के साथ बितानी होती थी। जाने कब तक सामंत इसी तरह डोली लेता रहा। और तब एक बार एक लड़की ने सहसा इस नियति से इनकार कर दिया। दूल्हा और बाराती सामंत की सेना से लड़ते हुए मारे गए और वह नवविवाहिता सती हो गई।

सती के शाप से सामंतों का परिवार नष्ट हो गया। गाँववालों में उन्हीं दिनों से बेटी की शादी चुपचाप, लगभग छुपाकर करने का रिवाज चल पड़ा था।

"आप भी यह सब मानते हैं ?" मैंने वापसी में अपनी हैरानी दबाने की कोशिश करते हुए पूछा।

"हाँ।"

"मगर अब तो सामंत नहीं हैं ?"

जवाब में उन्होंने अपनी हमेशा जैसी सख्त मुस्कराहट के साथ मेरी तरफ देखा और बस। जाने क्यों, कई रोज तक रामेश्वर बाबू को देखकर मुझे एक बेचैनी-सी महसूस होती रही थी, किसी अनजाने बियाबान में भटक जाने की-सी। या शायद कुछ और।

मल्लावाँ की दूसरी यात्रा बहुत खराब स्थितियों में हुई। उन दिनों हमारी यूनियन खासी परेशानी में थी। कुछ लोगों ने एक समानांतर संगठन बना लिया था और उनकी सफलता का सबूत यह भी था कि सरकार ने उनसे कर्मचारियों की समस्याओं पर बातचीत भी शुरू कर दी थी। इसके विरोध में मंत्री के घर पर एक बड़े प्रदर्शन और धरने की बात तय हुई। प्रदर्शन के तीन दिन पहले से रामेश्वर बाबू गायब थे। मैंने जाहिर नहीं किया लेकिन इस अनुपस्थिति ने मुझे गहरी आशंकाओं में लपेट दिया था। रामेश्वर हमारी सबसे बड़ी शक्ति ही नहीं, हमारा आत्मविश्वास भी थे। पर उपाय कोई नहीं था। प्रदर्शन तो होना ही था।

मुझे लगभग बौखला देने की स्थिति तक चकित करते हुए रामेश्वर ठीक उस वक्त प्रकट हुए जब मंत्री की कोठी पर पहला नारा लगाया गया।

उनकी इस अनुपस्थिति पर मैं उनसे जवाबतलब करूँ, इससे पहले ही वे व्यस्त हो गए। धरने की बाकी तैयारियों में लोग यह भूल गए थे कि यहाँ ऐसी किसी ऊँची जगह की भी व्यवस्था करनी थी जहाँ से नेता भाषण दे सकें। अभी शुरुआती नारे लग ही रहे थे कि रामेश्वर बाबू ने दो साइकिलों को जोड़कर तख्ते और छोटे डंडों के सहारे एक कामचलाऊ मंच तैयार कर दिया।

प्रदर्शन समाप्त होने के बाद पहला मौका पाते ही मैंने रामेश्वर बाबू को धर लिया, "कहाँ थे आप तीन दिन ? यहाँ तो सारा काम ही चौपट हो रहा था।"

रामेश्वर ने जवाब नहीं दिया सिर्फ मेरे चेहरे की तरफ देखा, पत्थर पर खोदकर बनाई गई अपनी सख्त मुस्कराहट के साथ और सड़क के दूसरी तरफ खड़ी एक मोटर की तरफ इशारा किया। उन्हें घूरते हुए खीजकर मैंने पूछा, "क्या है वहाँ ?"

"चलना है।"

"कहाँ चलना है ? बात क्या है ?" मेरे सवाल बेकार थे। वे और कुछ बोलनेवाले नहीं थे। दुबारा उन्होंने जिस तरह इशारा किया उसके उत्तर में सामने खड़ी मोटर में जा बैठने के अलावा कोई उपाय भी नहीं था। मोटर ड्राइवर मेरा परिचित था। मोटर ड्राइवर यूनियन का सचिव था मगर मोटर विभाग की नहीं थी। मुझे लगा शायद किसी कर्मचारी के साथ बिजलीघर में दुर्घटना हो गई है। मगर मोटर बिजलीघर नहीं गई। जिला अस्पताल के पीछे घूमकर पास बनी एक वीरान-सी छोटी इमारत के सामने रुक गई। वह मुर्दाघर था। इसके बाद के मेरे सारे अनुमान गलत साबित हो गए। और यहाँ से बहुत-बहुत शर्मिंदा होने की बारी मेरी थी।

रामेश्वर की पत्नी को बच्चा होनेवाला था। प्रसव में कुछ गड़बड़ी हो गई थी और वे पत्नी को अस्पताल ले आए थे। अस्पताल में भी फायदा कोई नहीं हुआ। बच्चे सहित पत्नी की मृत्यु हो गई और सुबह उसे मल्लावाँ ले जाने के बजाय रामेश्वर ने मुर्दाघर में रख दिया। इतने काम में उन्हें प्रदर्शन के समय पहुँचने में थोड़ी-सी देर हो गई थी।

आप कल्पना कर सकते हैं ऐसे पति की जिसे परिवार से लगाव हो और वह पत्नी को मुर्दाघर में छोड़कर जुलूस में शामिल हो जाए और उसके चेहरे पर एक शिकन नजर न आए ? जब आप उसे जुलूस में देर से आने के लिए जलील करें तो वह अपनी हमेशा जैसी पथरीली मुस्कराहट लिए लज्जित होने का नाटक भी करे ताकि आपको संतोष हो सके ?

ऐसा आदमी आतंकित करता है, मुर्दाघर के चबूतरे पर लगन के साथ बीवी की लाश पर सफेद कपड़ा लपेटता हुआ वह, अगले कई रोज, मुझमें

एक खौफ बनकर समाया रहा।

लाशगाड़ी मल्लावाँ पहुँचने और शवदाह का प्रबन्ध होने तक मैंने रामेश्वर बाबू के चेहरे पर जो पथरीली मुस्कराहट चिपकी देखी थी, वह सहसा उस वक्त गायब हो गई जब उन्होंने पत्नी की चिता में आग दी। उस वक्त सूरज का पीलापन काला पड़ने लगा था। सूरज की उस धुआँयी काली-सी रोशनी और चिता में लगाई जाती आग की चमक में मैंने देखा, रामेश्वर बाबू के चेहरे की वह पथरीली मुस्कराहट गायब थी और वहाँ एक मुट्ठी राख-सी फैली थी, जैसे किसी फूस के घर में आग लगने के बाद वहाँ वही बच गई हो, दहकती हुई लेकिन बेरंग। चिता में आग लगाते वक्त पत्थर की उस मुस्कराहट का गायब होना एक डरावना अनुभव था। आपको भी एक क्षण के लिए ऐसा लगता जैसे रामेश्वर की वह मुस्कराहट फरार हो चुकी हो और जिस वक्त वे बीवी की चिता में आग दे रहे थे, उस वक्त वह कहीं और आग लगा रही हो।

यह मल्लावाँ की मेरी दूसरी यात्रा थी। इस बार मैं मल्लावाँ माई नहीं जा सका। अवसर ऐसा नहीं था। रामेश्वर बाबू की पत्नी की मृत्यु के बाद मल्लावाँ में और ज्यादा सन्नाटा लगने लगा। दूसरे दिन सोमवार नहीं था लेकिन शाम को गाड़ी पकड़ने के लिए स्टेशन आते वक्त लगा, आसपास की खामोशी की खुश्क परत फोड़कर औरतों का हुजूम बाहर आनेवाला है, गाते हुए—असुर दानव ने शीतला माई को चिट्ठी लिखी है कि मैं तुमसे शादी करूँगा—उनचास घोड़े और पचास हाथी लेकर असुर दानव आया था—शीतला माई के हाथ में ढाल और तलवार थी—

क्या यही है रामेश्वर बाबू की फरार मुस्कराहट ?

शीतला माई के हाथ में ढाल और तलवार थी—

क्या यही है वह पथरायी हुई मुस्कराहट जो सतह फोड़कर धीरे-धीरे बाहर आती है, आसपास की गर्द और दरख्तों के रहस्यजाल को घेरती हुई अस्पष्ट जंगली आवाजों की गुंजलक लिए हुए ? जैसे वह गायन नहीं, ऐंठी हुई रस्सी के गुच्छे हों जो अदृश्य प्राचीरों पर उछाले जाएँगे। और फिर उनसे होकर तलवारें और ढालें कंगूरों पर चढ़ जाएँगी···

उनचास घोड़े और पचास हाथी लेकर असुर दानव आया। देवी के

हाथ में तलवार और ढाल—

मल्लावाँ माई भी फरार हो गई थी। बीवी की चिता में आग देते वक्त रामेश्वर बाबू की मुस्कराहट की तरह। असुर दानव आया था उनचास घोड़े और पचास हाथी लेकर। मल्लावाँ माई की डोली उठ रही थी। दुबली-सी घोड़ी पर तलवार बाँधे, कलगीदार साफा पहने दूल्हा डोली के साथ था। तभी असुर दानव आया था।

"ओ रे कमीने, हराम की औलादो कहारो, डोली उधर मोड़ो, हवेली की तरफ !" राजा सूर्यभान सिंह के घुड़सवारों ने चिल्लाकर हुक्म दिया। कहारों ने अचकचाकर देखा और गाँववालों में भगदड़ मच गई।

"राजा का हुक्म है, मालूम नहीं ?" सिपाही फिर चिल्लाए।

जैसे लताओं से घिरी गुफा से सिंहनी बाहर आती है वैसे मल्लावाँ माई डोली का परदा चीरकर बाहर आ गई। ठोड़ी तक लटकी लाल चूनर के भीतर से चिनगारियाँ-सी छूटीं, "कौन कहता है डोली राजा की हवेली जाएगी ! डोली आगे बढ़ाओ !"

ठीक तो है। डोली हवेली क्यों जाये ?—दूल्हे ने फैसला कर लिया : क्या हमारी इज्जत नहीं है ?

सरदार सिपाहियों से गरजकर बोला, "इसकी ऐसी मजाल ! पकड़ लो इसे और घसीटकर हवेली ले चलो !"

सिपाही टूट पड़े। बारह बाराती और एक दूल्हा। तलवार और लाठियों से लड़े। असुर दानव के उनचास घोड़ों और पचास हाथियों ने आखिर दूल्हे सहित जब बारह बारातियों का सिर काटा उस वक्त तक धू-धू जलती चिता में मल्लावाँ माई बैठ चुकी थी।

सरदार चिल्लाया, "उसे जल्दी बाहर खींचो।"

"हाथ मत लगाना मुझे ! पत्थर हो जाएगा जो हाथ लगाएगा ! और कह देना राजा सूर्यभान सिंह से, उसका वंश नाश हो जाएगा।" मल्लावाँ माई ने गरजकर कहा। चिता खूब जोर से जल रही थी। लप-लप करती लपटों के साथ जैसे बहुत-सी तलवारें नाच रही हों।

देवी लड़ते-लड़ते मठ में समा गई। बच रहा उनका डरावना अभिशाप।

राजा सूर्यभान सिंह ने हवेली में आराम से गद्दे पर लेटे-लेटे सब सुना।

उगालदान में पीक थूकी और बड़ी-बड़ी मूँछों को उछालकर देर तक हँसता रहा। उसकी सुर्ख आँखों में आँसू आ गए हँसी के मारे।

अगले दिन वह सज-धजकर घोड़े पर निकला तो बोला, "आज मेरा घोड़ा उस औरत की चिता पर मूतेगा।"

विजेता की तरह वह गाँवों में घूमता रहा। दोपहर गन्ने के खेतों की तरफ से निकला जहाँ जमीन में गढ़ा बनाकर बड़े-बड़े कड़ाहों में गुड़ बन रहा था। वह किनारे आकर खड़ा ही हुआ था कि जाने क्या हुआ कि घोड़ा उछला और राजा लुढ़ककर सीधे खौलते गुड़ के कड़ाह में जा गिरा। फद्फद्फद् करके बड़े-बड़े बुलबुले धुआँ छोड़ रहे थे, जब राजा सूर्यभान सिंह को लकड़ियों के सहारे कड़ाह से बाहर निकाला गया।

अगले हफ्ते राजा का बेटा पलंग पर मरा पाया गया। उसका बदन नीला था। उसकी रजाई में दो बालिश्त का सुर्ख सिन्दूरी साँप था। कहते हैं मल्लावाँ माई ने अपनी चूनर की एक धज्जी फाड़कर वहाँ फेंकी थी जो साँप बन गई थी।

मल्लावाँ खास की औरतें मानती हैं कि मल्लावाँ माई उस दिन चिता में स्वयं नहीं मरी थीं। उन्होंने अपनी माया जलाई थी और खुद अलोप हो गई थीं, राजा को दण्ड देने के लिए।

मल्लावाँ माई फरार हुई थी। रामेश्वर बाबू की मुस्कराहट की तरह। इस मुस्कराहट को मैंने एक बार और ठीक वैसे ही फरार होते देखा था।

वे बहुत तकलीफदेह गर्मी के दिन थे। दफ्तर की खिड़कियाँ भरसक बन्द किए नीम अँधेरे में हम लोग माँग-पत्र तैयार कर रहे थे। तभी रामेश्वर आए। सहसा अँधेरे में आकर उन्होंने मुझे खोजने के लिए आँखों पर जोर डाला।

"आइए रामेश्वर बाबू !" मैंने उन्हें पहले देख लिया, "माँगें तैयार हो गई हैं। गंगाराम को भी दिखा लीजिए।"

गंगाराम अजीब आदमी था। वह किसी-न-किसी माँग में हमेशा ऐसा पहलू खोज लेता था जिससे उसे नुकसान हो रहा हो। इस अनुसन्धान के बाद वह बहुत ज्यादा शोर मचाता था और यूनियन तोड़ देने की धमकी देने

लगता था। हमें उसे मनाने में बहुत मेहनत करनी पड़ती थी। इसके बावजूद संगठन के काम में हमें सबसे ज्यादा मदद उसी से मिलती थी। कभी-कभी लगता था, हम सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण वही है।

रामेश्वर दो पल ठिठके, फिर बोले, "गंगाराम मर गया, चलिए उठिए।"

"क्या ? क्या हुआ गंगाराम को ?"

रामेश्वर ने जवाब नहीं दिया। दरवाजे की तरफ मुड़ते हुए कहा, "चलिए, चलिए।"

इससे आगे कुछ पूछना बेकार था। सीढ़ियाँ उतरकर हम नीचे आए। बड़े दरवाजे पर एक मोटर खड़ी थी। रामेश्वर मोटर का दरवाजा खोलकर खड़े हो गए।

बिजलीघर में दुर्घटना हो गई थी। बहुत शक्ति की बिजली की चपेट में आकर गंगाराम जल गया था। उसके पैर के जूते में सुराख करती हुई बिजली की धारा फर्श में समा गई थी। जब तक कोई कुछ समझे, वह मर चुका था। लाश मुर्दाघर जा चुकी थी और उसकी लगभग अर्धविक्षिप्त हो चुकी पत्नी इमारत के बाहर सीढ़ियों के पास बैठी थी, अपने गुमसुम तीन छोटे बच्चों के साथ।

रामेश्वर ने गंगाराम की बीवी को घर पहुँचाया और तब हम लोग अस्पताल की तरफ चले।

जब हम वापस लौटे तो शाम हो चुकी थी। परिषद् का सचिव सीढ़ियों के पास खड़ा था, शायद काफी देर से।

अब मेरा ध्यान गया, जिस मोटर पर हम लोग गए थे, वह सचिव की थी। सचिव जरूर वहाँ इस तरह अपनी मोटर के इस्तेमाल पर देर तक चीखता रहा होगा क्योंकि परिषद् का दफ्तर बन्द होने का वक्त होने पर भी वहाँ सन्नाटा था।

मोटर से पहले मैं उतरा होता तो स्थिति शायद ऐसे न बिगड़ती। पहले रामेश्वर ही उतरे, अपनी मुसी हुई खाकी वर्दी पहने। अपनी गाड़ी से बाहर आते रामेश्वर से ज्यादा वह उस वर्दी पर चिढ़ा होगा। बहुत ऊँची आवाज में वह चीखा, "कैसे हिम्मत पड़ी तुम्हारी मेरी कार में जाने की ?"

अब तक वह पथरीली मुस्कराहट रामेश्वर के चेहरे पर थी, पर मैंने देखा, किसी बेहद फुर्तीले छापामार की तरह देखते-देखते वह मुस्कराहट फरार हो गई। उनका छोटा-सा शरीर तनकर हल्के से काँपा। उन्होंने शब्द खोजते हुए दो क्षण उसे घूरा और अपनी सख्त आवाज में बोले, "फूँक दूँगा सब ! तुमको ! तुम्हारी मोटर को ! दफ्तर को ! परिषद् को ! फूँक दूँगा ! कलेजे में आग लगी है !..."

सचिव शायद एक क्षण में स्थिति की गम्भीरता समझ गया क्योंकि उसका खुला हुआ मुँह एकदम बन्द हो गया। उस वक्त तक मैं और चार और साथी मोटर से उतर चुके थे। जाने कैसे रामेश्वर के इतने शब्द पूरे होते न होते चतुर्थ श्रेणी की बीसियों वर्दियाँ वहाँ प्रकट हो गई थीं।

सचिव को दुर्घटना की सूचना हो गई थी। उसे उम्मीद थी कि अपनी गाड़ी के ऐसे अनधिकृत प्रयोग पर क्षोभ दिखाकर वह कर्मचारियों की पहली उत्तेजना को दबा लेगा।

मैंने रामेश्वर का कन्धा दबाया और अन्दर ले चला। उनका शरीर तप रहा था और साँस बहुत तेज चल रही थी। कुर्सी पर बैठकर उन्होंने पीछे सिर टिका लिया और आँखें बन्द कर लीं। थोड़ी देर में शायद सो गए, या उत्तेजना के कारण अचेत हो गए।

इसके बाद जब वे जागे तो वह मुस्कराहट वहाँ हमेशा जैसी मुस्तैदी से मौजूद थी।

गंगाराम के न रहने का असर हमें अब महसूस हो रहा था। लगता था, यूनियन के जाने कितने कागज खो गए हैं। दफ्तर का सामान बेतरतीब हो गया है और यूनियन के बहुत-से कार्यकर्ता कहीं गायब हो गए हैं। कई रोज हम इस खालीपन से लड़ते रहे। इसी बीच हमारे महासंघ को एक और झटका लगा। हमें सूचना मिली कि दूसरी समानान्तर यूनियन को मान्यता देने के सवाल पर सदस्यता की पड़ताल होगी।

इस गलत कार्यवाही का जवाब हम बहुत सख्त देंगे—हमने घोषणा की। हमने फैसला किया कि हम इस सदस्यता पड़ताल का बहिष्कार करेंगे। कर्मचारी संघ के अधिकारियों पर हमले के विरुद्ध संघर्ष इतना तेज

होगा कि प्रशासन काँप जाएगा।

प्रशासन ने जवाबी हमला हमारी अपेक्षा से कहीं ज्यादा जल्दी किया। अगले रोज जब हम आए तो पाया यूनियन के दफ्तर पर ताला पड़ा था और दरवाजे पर नोटिस चिपका था कि सदस्यता पड़ताल से बाहर होने के कारण समानान्तर यूनियन को मान्यता दे दी गई है। मैं जानता हूँ, गंगाराम होता तो अब तक ताला टूट चुका होता।

उस शाम जिस वक्त हम संवाददाताओं से बात कर रहे थे, किसी ने मुझे बताया, मुख्यालय में आग लग गई है।

अच्छा हुआ—मैंने विद्रूप से कहा। अखबार वालों से बातचीत खत्म होने तक मैं मानसिक रूप से इतना थक गया था कि घर चला गया। आग की बात लगभग भूल ही गया। बस, इसी एक रात में सबकुछ हो गया।

रामेश्वर को गिरफ्तार कर लिया गया था। न सिर्फ गिरफ्तार किया गया था बल्कि पुलिस उन्हें पूछताछ के लिए किसी अनजानी जगह ले गई थी।

इसके बाद मेरी उनसे मुलाकात बहुत कोशिशों के बावजूद तब तक नहीं हुई जब तक मुझे मल्लावाँ में उनके होने की खबर नहीं मिली।

मल्लावाँ की मेरी तीसरी यात्रा यही थी। सन्देश देनेवाले ने खास कुछ नहीं बताया था लेकिन मुझे गहरी आशंकाओं ने घेर लिया था। मुझे लग गया था कि मल्लावाँ में मैं कुछ न कुछ ऐसा देखने जा रहा हूँ जो बहुत सुखद नहीं होगा।

रामेश्वर आँगन में एक चारपाई पर इस तरह लेटे मिले जैसे उसी तरह कोई उन्हें यहाँ तक लाकर रख गया हो। उनकी चिरस्थायी खामोशी और मुस्कराहट के साथ शरीर देखकर कोई भी विश्वास कर सकता था कि उन्हें एक लम्बे समय तक यातना दी गई है।

मगर क्यों ? उन्होंने यह क्यों किया ? मैंने आजिजी से पूछा। जवाब में उन्होंने सिर्फ एक सवाल भर ही पूछा, "वहाँ सब ठीक ?"

लगा खाँसी आएगी पर आई नहीं। अभी मैं गर्मी का सामना करने की तैयारी कर रहा था कि तभी औरतों के गाने की आवाज आनी शुरू हो गई :

असुर दानव ने शीतला माई को चिट्ठी लिखी कि मैं तुमसे शादी

करूँगा। उनचास घोड़े और पचास हाथी लेकर असुर दानव आया। माता के हाथ में ढाल और तलवार थी—

रामेश्वर ने आसमान की तरफ देखा। सीने में कुछ ऐसा कंपन हुआ जैसे खाँसी आनेवाली हो—पर खाँसी के बजाय फिर हिचकी-सी आकर रुक गई।

उतरती शाम की तरफ उछाली जाती रस्सियों की तरह गीत अब बहुत दिशाओं से सुनाई देने लगा था।

ठीक इसी वक्त मैंने देखा, रामेश्वर बाबू के होंठों की वह मुस्कराहट वहाँ से गायब होने लगी—

'नहीं रामेश्वर बाबू, नहीं!' मैंने कहना चाहा पर उस गायब होती मुस्कराहट के साथ खाँसी की एक और कोशिश के बाद होंठों की बाईं कोर से रक्त की जो रेखा फूटी उसने मुझे चुप करा दिया।

हो जाने दो। उसे फरार हो जाने दो। हाथ में ढाल और तलवार—मल्लावाँ माई राजा से बदला लेगी न?

मुठभेड़

कितनी लम्बी और तीखी मार होती है फिर वह चाहे मौसम की हो या सिपाही की। चीखकर उड़ी फड़फड़ाती हुई चील की तरह रज्जन की तकलीफ-भरी हुई एक सदा-सी सुन पड़ी—"ओ माँ···"

नत्थू के हाथ कमर में बँधे कपड़े के छोर से बनाई छोटी-सी पोटली पर इस कदर ढीले पड़ गए कि पोटली उसके बदन का हिस्सा जैसा न बनी होती तो जरूर सरक गिरती। आवाज, बाँस जैसी तड़कती हुई तकलीफ-भरी वह चीख, ज्यादा लम्बी नहीं थी लेकिन नत्थू की पसलियों के अन्दर बहुत दूर तक और देर तक लकीर-सी खींचती चली गई।

कितनी लम्बी और तीखी मार होती है फिर चाहे वह मौसम की हो या सिपाही की।

जून की इस बहुत तीखी और बहुत ज्यादा चढ़े बुखार की तरह बेआवाज धूप में नत्थू जहाँ ठिठक गया था, वहाँ से सिर्फ कुछ कदम आगे ही उसके मकान की पिछली दीवार थी। कच्ची मिट्टी से खड़ी की गई उस दीवार पर सफेद सीपियाँ और घोंघे इस तरह उभर आए थे गोया वे वहाँ जड़ दिए गए हों। उस सफेद पच्चीकारी के बीच पानी की धार से कटी मिट्टी की सँकरी खड़ी धारियाँ जाहिर कर रही थीं कि मौसम की अगली मार पड़ते ही दीवार गलकर गिर जाएगी। शायद इस दीवार के गिरने पर भी वैसी ही दहलानेवाली और भद्दी आवाज हो जैसी आवाज इस बार रज्जन की सुनाई दी थी। नत्थू ठहर गया था। हो सकता है वह अगली चीख का इन्तजार कर रहा हो या फिर पहली ही चीख के अपने अन्तर में डूबने का समय लेना चाहता हो। रज्जन की आवाज दुबारा नहीं आई। मौसम की मार से छिली हुई दीवार की तरह ही शायद डंडे के सिर्फ एक